श्रीविश्वनाथो जयति ।

धर्म्मशिक्षाग्रन्थावली संख्या २ ।

कन्याशिक्षासोपान ।

कोमलमति बालिकाओंकी धर्म्मशिक्षाके अर्थ

भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेडके

शास्त्रप्रकाशविभाग द्वारा

प्रकाशित ।

काशी ।

चतुर्थावृत्ति ।

श्रीगोपालचन्द्र चक्रवर्ती द्वारा

भारतधर्म प्रेस काशीमें मुद्रित ।

सन् १९२९ ई० ।

 मूल्य -) एक आना ।

बालकोपयोगी पुस्तकें ।

आरोग्य साधन	।-)	कल्पलतिका बालचिकित्सा	।)
इतिहासकी कहानियां	॥=)	स्त्री शिक्षा भजनावली	-)॥
ईश्वरीय न्याय	॥)	वैष्णवरहस्य	)॥
खिलवाड़	।)	कन्याविनय चन्द्रिका	-)
खेल पचीसी	।)	डाक्तर सर जगदीशचन्द्र वसु और उनके आविष्कार	।=)
गधेकी कहानी	॥।)	इङ्गलिश ग्रामर	।)
जीवन मरणरहस्य	।)	सुगम साधन चन्द्रिका	=)
पुरुष परीक्षा	१)	आचार प्रबन्ध	१)
बालमनोरंजन	।=)	पारिवारिक प्रबन्ध	१)
बच्चोंकी रक्षा	।-)	सरल बंगला शिक्षा	१)
बाल विलास	।)	रामकी उपासना	।)
बिलाई मौसी	॥)	परलोक रहस्य	।)
भिखारीसे भगवान	१)	चतुर्दशलोक रहस्य	।)
मैं नीरोगी हूं या रोगी	।)	नित्यकर्म चन्द्रिका	।)
मैत्रीधर्म	।)	संक्षिप्त शरीर विज्ञान	॥=)
लड़कियोंका खेल	॥)	संक्षिप्त स्वास्थ्यरक्षा	॥=)
सुख तथा सफलता	।)		
हिन्दी ३० दिनमें	॥।)		

पताः—निगमागम बुकडिपो,
भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेड,
स्टेशन रोड, बनारस ।

श्रीजगन्मात्रेनमः ।

वाणी-पुस्तकमाला संख्या-५

कन्याशिक्षासोपान ।

काशी

भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेडके

शास्त्रप्रकाशविभाग द्वारा

प्रकाशित ।

—:*:—

चतुर्थावृत्ति ।

—:*:—

श्रीगोपालचन्द्र चक्रवर्ती द्वारा

भारतधर्म प्रेस काशीमें मुद्रित ।

—*—

सन् १९२९ ई० ।

 मूल्य -) एक आना ।

श्रीविश्वनाथो जयति ।

प्रस्तावना ।

—०*०—

भारतवर्ष भरमें धर्म्मशिक्षा विस्तार करनेके अर्थ श्रीभारतधर्म्ममहामण्डलके प्रधान व्यवस्थापक प्रभुके द्वारा अनेक धर्म्मग्रन्थ विभिन्न भाषाओंमें प्रणीत हुए हैं और वे क्रमशः प्रकाशित होते जाते हैं। स्त्रीशिक्षा-विस्तारके लिये भी कई एक ग्रन्थ प्रणीत हो चुके हैं। वाणी-पुस्तकमालाका यह पंचम संख्यक पुष्प है, इससे पहले इस ग्रन्थमालामें जो ग्रंथरत्न प्रकाशित हुए हैं, वे सब उच्चकोटिके जगत्‌की आध्यात्मिक उन्नतिके लिये प्रकाशित हुए हैं। श्रीआर्यमहिलाहितकारिणी महापरिषद्‌के द्वारा स्त्रीशिक्षा विस्तारका जो उद्योग हो रहा है, इस शुभ उद्योगमें सहायता देनेके अर्थ पूज्यपाद श्रीगुरु महाराजकी आज्ञासे इस ग्रन्थका स्वत्वाधिकार इस ग्रन्थमालाको दिया गया है। कोमलमति बालिकाओंमें स्त्रीशिक्षा विषयक धर्मशिक्षा विस्तारके लिये यह प्रथम पुस्तक प्रकाशित हो रही है। इसके द्वारा कन्यापाठशालाओंको तथा सनातनधर्म्मावलम्बियोंकी कन्याओंको धर्म्मशिक्षा देनेमें पूर्ण सहायता मिलेगी, ऐसी आशा है।

स्त्रीशिक्षा उपयोगी अन्यान्य पुस्तकें भी क्रमशः इस ग्रन्थमालामें प्रकाशित होकर सनातनधर्मावलम्बी महिलासमाजकी सेवा कर सकेंगीं।

काशीधाम
वसन्तपञ्चमी १९८५ } श्रीगुरुपादपद्माश्रिता।

॥ श्रीः ॥

कन्याऽप्येवं पालनीया शिक्षणीयाऽतियत्नतः ।
यत्र नार्य्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ॥

इत्यादि स्मृतिः ।

कन्याशिक्षासोपान ।

१—कुमारीपूजा ।

यह सारा संसार जगज्जननी[1] महामायासे[2] उत्पन्न हुआ है, इसी कारण शास्त्रोंने उनकी स्तुति की है, कि—

देवि ! प्रपन्नार्तिहरे ! प्रसीद,
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं,
त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य ॥

हे शरणागत-दुःखनिवारिणि[3]! देवि ! प्रसन्न हो । हे सम्पूर्ण संसारकी जननि! प्रसन्न हो । हे विश्वेश्वरि ! प्रसन्न हो और जगत्की रक्षा करो। हे देवि! तुमही इस चराचर[4] विश्व[5] की ईश्वरी हो ।

---

(१) जगत्को उत्पन्न करनेवाली (२) आद्याशक्ति, ब्रह्मशक्ति, देवी (३) शरण आये हुएके दुःखोंको निवारण करनेवाली (४) जड़ चेतन, स्थावर जंगम, चलनेवाला व नहीं चलनेवाला (५) संसार, जगत्, दुनिया।

जिस प्रकार जगदम्बा[१] महामायासे यह संसार उत्पन्न हुआ है, उसी प्रकार नारीके द्वारा सृष्टि[२] उत्पन्न होती है। इसी कारण वेद और शास्त्रोंने नारीको जगदम्बा-स्वरूप करके वर्णन किया है, और इसी कारण कुमारी शरीरको आद्याशक्तिका[३] आधार[४] मानकर कुमारीपूजा करनेकी शास्त्रोंमें बिशेष आज्ञा है।

सनातनधर्म्ममें[५] नारीजातिका सम्मान[६] जितना अधिक वर्णन किया गया है और नारीजातिकी सुरक्षा[७] और पवित्रतावृद्धिके लिये जितने उपाय बताये गये हैं, उतने और किसी उपधर्म्म[८] में नहीं पाये जाते।

२—गृहकार्य ।

स्त्री घरकी मालकिन होनेसे 'गृहिणी' कही जाती है। इस कारण नारीजातिका प्रधान कर्तव्य घरके काम काज सीखना है। रसोई बनाना, परोसना, आयव्ययका लेखा रखना, झाड़ना बोहारना, बालकोंका लालन पालन करना, सीना पिरोना, कसीदा काढ़ना और देवपूजा करना

(१) जगत् भरकी माता (उत्पन्न करनेवाली) (२) संसार (३) ब्रह्मशक्ति, भगवती (४) आश्रय, जिसपर कोई चीज रहे (५) अनादिकालसे चला आनेवाला धर्म्म (६) सत्कार, आदर (७) अच्छी रीतिसे रक्षा (८) सनातनधर्म्मके अङ्गों या प्रत्यङ्गोंमेसे किसी एक या अधिकको लेकर प्रवृत्त होनेवाले धर्म्म ।

आदि सब सदाचार[१] स्त्रियोंको यथायोग्य रीतिपर सीखना उचित है। जो कन्याएँ पहलेसे इन आचारोंका यथायोग्य अभ्यास नहीं करतीं उनकी निन्दा होती है और वे अयोग्य[२] समझी जाती हैं जो कन्या गृहकृत्यमें योग्य नहीं बनती उसको न इस लोकमें यश मिलता है, न संसारमें सुख मिलता है और न परलोकमें आनन्दकी प्राप्ति होती है।

३—धर्मशिक्षा।

पुरुषजातिके लिये बहुत प्रकारकी शिक्षा देनेकी विधि[३] हैं, परन्तु स्त्रीजातिके लिये विशेषतया धर्म्मशिक्षा देनेकी आज्ञा शास्त्रोंमें पाई जाती है। पुरुष और स्त्री इन दोनोंके धर्म्मोंमें, कर्तव्योंमें और अधिकारोंमें आकाश और पातालका सा अन्तर है, इस कारण पुरुषशिक्षा-प्रणाली[४] और स्त्रीशिक्षा-प्रणाली दोनोंमें शास्त्रकर्ता पूज्यपाद[५] महर्षियोंने अन्तर रक्खा है। स्त्रियोंको विशेषतया धर्मशिक्षाका ग्रहण[६] करना उचित है। सतीत्वधर्म क्या है, तपधर्म क्या है, व्रत किसको कहते हैं, कैसे योग्य गृहिणी होना उचित है? ये सब बातें बालकपनसे सीखना कन्याओंका कर्तव्य है जिससे बुद्धि चञ्चल

(१) सत्पुरुषोंके आचरण (बर्ताव) (२) योग्यतारहित, नालायक (३) आज्ञा (४) सरणी, पद्धति, तरीका (५) पूजनीय, वन्दनीय (६) लेना।

हो, जिससे विलासमें[१] बुद्धि जाय और जिससे धर्मभाव[२] कम हो ऐसी बातोंमें कन्याओंको कभी भी ध्यान देना उचित नहीं है। जीवन पर्यन्त स्त्रियोंको धार्मिक[३] चिन्ता, धार्मिक कथन, धार्मिक पाठ पूजा व्रत आदि और धार्मिक ग्रन्थोंका अनुशीलन[४] करना उचित है।

४—तपधर्म्मकी प्रधानता ।

जिससे ऐहलौकिक[६] सुखप्राप्ति, पारलौकिक[७] सुखप्राप्ति और मुक्ति[८] प्राप्त हो उसको धर्म्म कहते हैं। धर्म्मके इस लक्षणको सदा स्मरण रखना उचित है। धर्म्मके बहुतसे अङ्ग हैं। उन धर्म्माङ्गोंमेंसे नारीजातिके लिये तपधर्म्मकी प्रधानता शास्त्रोंमें कही गई है। नारीजातिके सब धर्म्म तपमूलक[९] हैं, इस-कारण तप साधन[१०] की ओर नारियोंको सदा ध्यान देना उचित है। गृहिणीके तपसे ही पतिको सुखप्राप्ति और पतिके धर्म्मकी वृद्धि होती है। गृहिणीके तपसे ही धार्मिक, योग्य, तेजस्वी, बलवान, नीरोग,[११] स्वदेशहितैषी, विद्वान् और कुलपावन[१२] सन्ततिकी उत्पत्ति होती है। गृहिणीके तपसे

(१) भोग, ऐश (२) धर्मका भाव (लक्ष्य) (३) सोच, फिकर (४) विचारपूर्वक अभ्यास (५) मुख्यता (६) इस लोकका (७) परलोकका (८) जन्म-मरणसे छूटना (९) तप है मूलमें जिनके (१०) नियमपूर्वक अभ्यास (११) रोगरहित, तन्दुरुस्त (१२) कुलको पवित्र करनेवाला।

ही गृहस्थाश्रममें[1] धन, ऐश्वर्य्य,[2] सुख और शान्ति यथेच्छ मिल सकती है । मन वचन इन्द्रियों[3] और शरीरादिमें जो स्वाभाविक[4] भोगप्रवृत्ति[5] है उसको रोककर अपने अधीन में रखनेको तप कहते हैं। तपधर्म्मकी महिमा अपार[6] है ।

५—सेवाधर्म्म ।

धर्म्मके जितने अङ्ग और उपाङ्ग[7] हैं उन सबोंमेंसे सेवाधर्म्म सबसे कठिन और महिमाप्रद[8] है । सेवाधर्म्मसे तपकी वृद्धि होती है । सेवाधर्मके नियमित[9] पालन करनेसे इस लोकमें सबकी प्रसन्नता और परलोकमें ऋषि देवता पितरोंको स्वतः ही प्रसन्नता प्राप्त होती है । सेवाधर्म्मके पालनसे ऐश्वर्य, श्री[10] और कीर्तिकी प्राप्ति होती है कुमारियोंको निरलस[11] होकर माता, पिता, गुरुजन और शिशु[12] तथा आत्मीय[13] सज्जनोंकी सेवा करना उचित है। स्त्रीजातिके लिये एकमात्र पतिसेवा ही परमधर्म्म है । अपने सुखको भूलकर दूसरेकी परिचर्य्या[14] यथाविधि[15] करनेसे सेवाधर्मका साधन होता है आत्मीयजनोंकी सेवा,

---

(१) विवाहके बाद को आश्रम है (२) दौलत, वैभव (३) आंख आदि (४) कुदरती, प्राकृतिक (५) प्रवृत्त होना, लगजाना (६) जिसका पार न हो, जो कहनेमें न आ सके (७) अङ्गके अङ्ग, जैसे वाचनिक तपका उपाङ्ग सत्य है (८) महिमा देनेवाला (९) नियमसे (१०) शोभा (११) आलस्यरहित (१२) बालक (१३) अपने (१४) सेवा (१५) विधिके अनुसार ।

शिशुसन्तानकी सेवा, वृद्धोंकी सेवा, रोगीकी सेवा आदि अधिकार भेदसे सब प्रकारकी सेवा करते समय अपने सुख और सुविधाका विचार एक बार ही भूल जानेसे सेवाधर्म्मके फलकी प्राप्ति होती है ।

६—आचार और शौच ।

सब धर्म्माङ्गोंमेंसे आचार प्रथम माना गया है । धर्म्मानुकूल[१] शारीरिक[२] चेष्टामात्रको सदाचार कहते हैं । शास्त्रोक्त[३] सदाचारके साधनकी ओर नर नारीमात्रको विशेष ध्यान रखना उचित है । जब नारी सदाचारिणी होती है तबही पुरुष भी सदाचारी बन जाते हैं । और माताके सदाचारिणी[४] होनेसे ही पुत्रकन्या सदाचारी हो सकते हैं । सदाचार और शौचकी शिक्षा बाल्यावस्थासे[५] ही स्त्रियोंको होना उचित है । शौच[६] दो प्रकारका होता है एक बाह्य[७] शौच और एक अन्तशौच[८] । प्रतिदिन नियमपूर्वक स्नान करना, विधिपूर्वक गात्र[९]मार्जन[१०] करना, लघुबाधा[११] व दीर्घबाधा[१२] त्याग करनेके अनन्तर यथाशास्त्र पवित्रता सम्पादन करना, वस्त्रादि

(१) धर्मके अनुसार (२) शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाला (३) शास्त्रोंमें कहा हुआ (४) श्रेष्ठ आचरण करनेवाली (५) बालकपनकी अवस्था (६) शुद्ध होना (७) बाहरका (८) भीतरका (९) शरीर (१०) साफ (११) पेशाब (१२) पाखाना ।

स्वच्छ और पवित्र रखना, गृहपदार्थ[1] पात्रादि मल रहित और पवित्र रखना, गृहस्थाश्रमके सब व्यवहार्य्य[2] पदार्थ शास्त्रानुकूल शुद्ध रखना इत्यादि कार्य्यद्वारा बहिः शौचका साधन होता है। और मनको असद्विचार और पाप चिन्तासे रहित रखनेसे अन्तःशौचका साधन होता है।

७—अतिथि[3] सत्कार।

गृहस्थाश्रमके लिये पांच महायज्ञ कहे हैं, उन पांच महायज्ञोंमेंसे नृयज्ञ सबसे प्रथम माना गया है। अतिथि-सत्कारको ही नृयज्ञ कहते हैं। घरपर आये हुए स्त्री पुरुष चाहे किसी जाति और किसी अधिकारके होवें उनका यथायोग्य सत्कार[4] पूर्वक पूज्य[5] बुद्धिसे स्वागत, आसन, अन्न जल आदिसे सत्कार करनेसे नृयज्ञका साधन होता है। नृयज्ञ महायज्ञ है। वेद और शास्त्रोंमें ऐसा पाया जाता है कि मनुष्यमात्रके लिये नृयज्ञका साधन करना परम धर्म्म है। घर पर आये हुए अतिथिके बहिर्लक्षण[6] और जाति आदिका कुछ भी विचार न करके यथायोग्य रीति पर उसके सत्कार करनेका उपाय तुरन्त करना उचित है। घर पर आये हुए अतिथिका विमुख[7] होना महापाप है।

---

(१) चीज़ (२) व्यवहारमें आने योग्य (३) पाहुना (४) आदर (५) बड़प्पनकी बुद्धिसे (६) बाहरी चिह्न (७) लौटना।

८—व्रत और कथा ।

व्रत तपका एक श्रेष्ठ[1] उपाङ्ग है । नारीधर्म्मके वर्णन करते समय पूज्यपाद महर्षियोंने नारीधर्म्मके साथ व्रतपालन का बहुत कुछ सम्बन्ध रक्खा है । किसी किसी विषयके त्याग और किसी किसी विषयके ग्रहणकी प्रतिज्ञाको[2] व्रत कहते हैं । किसी नियमविशेषके पालनमें दृढ संकल्पको[3] भी व्रत कहते हैं । जब नारीधर्म्म तप-प्रधान हैं तो व्रत-धर्म्मका अधिक रूपसे पालन करना नारीजातिका अवश्य कर्तव्य है । हमारे शास्त्रोंमें नारीजातिके करने योग्य अनेक व्रतोंका वर्णन है सो यथाशक्ति करने योग्य हैं, व्रतोंके पालन करानेमें सहायक जो पौराणिक[4] अथवा लौकिक[5] कथा परम्परा[6] रूपसे अपने अपने देशके सदाचारके अनुसार प्रचलित[7] हैं उनको कथा कहते हैं । ऐसी पौराणिक और धर्म्मभित्ति[8]-मूलक लौकिक कथाओंको सीखकर आपसमें कहने व सुननेसे मनकी पवित्रता और दृढताकी वृद्धि होती है और पुण्य मिलता है ।

---

(१) उत्तम (२) वायदा (३) करनेकी इच्छा (४) पुराणों-की (५) संसारकी (६) क्रमानुगत (७) जारी (८) आधार ।

९—शील और लज्जा ।

नारीजातिके लिये शील[1] परमाश्रय है, और लज्जा[2] परम सहायक[3] है । सब भूषणोंसे[4] स्त्रियोंका लज्जा भूषण अतिश्रेष्ठ[5] है। और सब गुणोंसे शीलगुण अति पवित्र है। जिस स्त्रीमें लज्जा नहीं है वह स्त्री समाजके योग्य नहीं है। आर्य्यजातीमें लज्जाहीना स्त्री आदरणीय[6] नहीं होती। लज्जाके द्वारा पाप निकट नहीं आसकता। लज्जाके द्वारा नारीधर्म्मकी रक्षा होती है और लज्जाके द्वारा स्त्रियोंकी पवित्र शोभा-वृद्धि होती है । नम्र होनेसे शीलकी वृद्धि होती है, अहंकार-दमन[7] करके दूसरोंको सद्व-व्यवहार[8]से प्रसन्न करनेकी चेष्टासे शीलताकी रक्षा होती है । जहां शील है वहां सब धर्म्म आजाते हैं । शीलवती नारी जिस गृहमें रहती है वहां सब देवताओंका निवास अपने आप होजाता है ऐसा शास्त्र कहते हैं ।

१०—महायज्ञ ।

अपने इहलोक और परलोककी उन्नति जिन जिन

---

(१) धर्मकी मर्यादा (२) शरम, लाज (३) सहायता देनेवाला (४) गहने (५) अत्यन्त उत्तम (६) आदर करने योग्य (७) अभिमानको दवाना (८) अच्छे वर्त्तावसे ।

क्रियाओंसे होती है उनको यज्ञ कहते हैं और देश तथा धर्म्मकी उन्नति करनेवाले जो कर्म्म हैं उनको महायज्ञ कहते हैं। अर्थात् औरोंके ऐहलौकिक और पारलौकिक उन्नति करानेवाले जो कर्म्म हैं उनको महायज्ञ कहते हैं। जिससे पुरुष, यज्ञ और महायज्ञके साधनोंमें प्रवृत्त[१] हो सो गृहिणीको करना कर्तव्य है। महायज्ञका महत्त्व[२] पुत्र समझसकें और महायज्ञका साधन करके सुपुत्र अपने जीवनको सार्थक करना समझे ऐसा उपदेश पुत्र कन्याओंको बालकपनसे ही मिलना उचित है। मनुष्यमें जितनी स्वार्थपरता[३] अधिक होगी उतना ही उसमें पशुभाव[४] अधिक है ऐसा समझा जायगा। और नर नारियोंमें जितनी निष्काम प्रवृत्ति,[५] परोपकार[६]-प्रवृत्ति और स्वार्थ[७]-त्यागकी वृद्धि होगी उतने वे देवत्वको[८] प्राप्त होंगे।

११—भक्ति और उपासना।

पिता माता और गुरुजनोंमें अनुरागको[९] श्रद्धा कहते

---

(१) लगे (२) बड़प्पन (३) खुदगर्जी (४) जानवरपन (५) विना फलेच्छाके प्रवृत्त होना (६) दूसरोंके उपकारमें प्रवृत्त होना (७) अपने मतलबको छोड़ना (८) देवतापन (९) प्रेम।

हैं। भ्राता[1] व सखी आदिमें अनुरागको प्रेम कहते हैं। और पुत्र कन्यामें अनुरागको स्नेह कहते हैं। परन्तु भक्ति और भी उच्च व पवित्र राज्यका पदार्थ है। सर्व शक्तिमान्[2] जगत्पिता[3] श्रीभगवान्में जो भक्तका अनुराग होता है उसको भक्ति कहते हैं। जब पिता माता पति पुत्रादिमें स्वतः अनुराग होता है तो इनके देनेवाले संसारके सब ताप नाश करनेवाले जीवके परम सहायक श्रीजगदीश्वरकी भक्ति करना परम कर्तव्य है। प्रतिदिन यथाशक्ति ईश्वरकी उपासना और उनमें अपनी भक्ति दिन दिन बढ़ाना बालकपनसे ही उचित है। श्रीभगवान्के अङ्गरूप ऋषि, पितृ, देव, देवियोंमें भी भक्ति करना कर्तव्य है। जिन जिन साधनोंसे जगदीश्वर परमात्मामें भक्तिकी वृद्धि हो और उनसे सम्बन्ध निकट[4] होता हो उन साधनोंको उपासना कहते हैं।

१२—नारीजातिका श्रेष्ठत्व।

सृष्टिके विचारसे पुरुष और स्त्रीमें, स्त्रीका प्राधान्य[5] है इसी कारण पूज्यपाद महर्षियोंने नारीजातिकी सुरक्षा और पवित्रताके लिये शास्त्रोंमें इतनी दृढ़ आज्ञा की है। और

(१) भाई (२) सब प्रकारकी शक्ति रखनेवाले (३) जगतके पिता (४) पास (५) मुख्यता।

सृष्टिक्रियामें नारीजातिका दायित्व[१] भी सबसे अधिक है। पिताके न रहनेसे बालक बच सकता है, परन्तु माताके अभावसे[२] बालक कदापि जीवित नहीं रह सकता। नारी-जातिसे ही गृहस्थाश्रमकी रक्षा होती है और गृहस्थाश्रमीसे ही अन्य आश्रमोंकी रक्षा होती है इस कारण नारीजातिका महत्त्व शास्त्रोंमें अधिक माना गया है। नारीजातिके मह-त्त्वके साथ ही साथ संसारको ठीक रखकर धर्म्मानुकूल[३] चलानेके लिये नारीजातिका दायित्व ही सबसे अधिक है। इसी कारण आर्य्यनारी तपधर्म्मको पालन करके कष्ट सहती हुई अपने दायित्वको पालन करके गृहस्थाश्रमको धर्म्मानुकूल रखती है।

१३—आर्य्यजाति।

पूज्यपाद महर्षियोंने आर्य्यजातिका ऐसा लक्षण कहा है कि, जिस मनुष्य-जातिमें वैदिकमार्गका प्रचार हो अर्थात् जो मनुष्य-जाति वेदानुकूल सदाचार पालन करती हो, जिस मनुष्य जातिमें वर्ण और आश्रमधर्म्म प्रचलित हो और जिस जातिकी स्त्रियोंमें सतीत्वधर्म्मका यथार्थ[५] स्वरूप

(१) जिम्मेवरी (२) न होनेसे (३) धर्म्मके अनुकूल (मुता-विक) (४) दुःख, तकलीफ (५) वास्तविक, दरअसल।

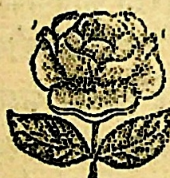
प्रकट रहे, उसीको आर्य्यजाति कहते हैं। पृथिवी भरमें केवल यह आर्य्यजाति ही ऊद्धर्ववाहू[१] होकर तेजस्विताके[२] साथ कह सकती है कि इस जातिके पुरुष वर्णाश्रमधर्म्मके द्वारा अनादिकालसे[३] अपनी पवित्रताको स्थायी[४] रखते आये हैं और इस जातिकी स्त्रियां त्रिलोक[५]-पवित्रकारी सतीत्वधर्म्मके पालन द्वारा जगत्पूज्य[६] होरही हैं। इसी कारण आर्य्यजातिकी महिमा पृथिवीभरमें सर्व्वप्रधान है

१४—सतीत्वधर्म्म।

सतीत्वधर्म्म त्रिलोकपवित्रकारी है। स्त्रीजाति केवल सतीत्वधर्म्मके पालन द्वारा सर्व्वोत्तम[७] गतिको प्राप्तकर सकती है। शास्त्रोंमें चार प्रकारकी सतियोंका वर्णन है। यथा-सर्व्वोत्तम सती, उत्तमसती मध्यमसती और कनिष्ठसती। कनिष्ठ-सती स्त्री वह कहाती है कि जो केवल अपने शरीरको पर-पुरुषके सङ्गसे पवित्र रख सके। मध्यमसती स्त्री वह कहाती है कि जो तप द्वारा अपने शरीरको और विचार द्वारा अपने मन तकको पर पुरुषके सम्बन्धसे पवित्र रख सके। उत्तम सती स्त्री वह कहाती है कि जिसकी मति सदा पवित्र रहे और

(१) ऊँचा हाथ करके (२) दावा, तेजी, निश्चयता (३) जिसका आदि नहीं है (४) स्थिर रहनेवाली (५) तीनों लोक (६) जगतमें पूजने योग्य (७) सबसे श्रेष्ठ (८) सबसे श्रेष्ठ सती।

अपने पतिके अतिरिक्त अपनेसे वयोवृद्ध पुरुषोंको पितारूपसे, समान वयसके पुरुषोंको भ्राता रूपसे और छोटी अवस्थावालोंको पुत्रके समान सदा देखा करे। और सर्व्वोत्तमसती स्त्री वह कहाती है कि जो किसी पुरुषको पुरुष रूपसे न देखे, केवल अपने पतिको ही पुरुषरूपसे देखे। सती स्त्री अपने तपके प्रभावसे इच्छित[1] फल प्राप्त कर सकती है। सतीधर्म्म अतुलनीय[2] है।



(१) चाहा हुआ (२) जो किसीसे समता करने योग्य न हो।

श्रीधर्मकल्पद्रुम ।

भारतके प्रसिद्ध धर्म्मवक्ता और श्रीभारतधर्म्ममहामण्डलस्थ उपदेशक-महाविद्यालयके दर्शनशास्त्रके अध्यापक श्रद्धास्पद श्री स्वामी दयानन्दजी महाराजने इस विराट् ग्रन्थका प्रणयन किया है। इसमें वर्त्तमान समयके आलोच्य सभी विषय विस्तारितरूपसे दिये गये हैं। पञ्चमहायज्ञका विज्ञान, वेदकी अपौरुषेयता तथा मन्त्र, ब्राह्मण और उपनिषद्का पूर्ण रहस्य, पुराणके आख्यानोंका गूढ़ विज्ञान, दर्शनोंका संक्षिप्त रहस्य, वर्णाश्रमधर्म्मका पूरातत्त्व, आर्य्यजातिमें पातिव्रत्यधर्म्मकी पूर्ण महिमाका रहस्य, उपासनाका पूर्णविज्ञान, सगुण-निर्गुण-अवतार आदिकी उपासना तत्त्व, मन्त्र योग, हठयोग, लययोग और राजयोगका विज्ञान और अङ्ग, आर्यजाति और समाज उन्नतिका उपाय, पितृपूजा, श्राद्ध, परलोक आदिका रहस्य, षोडश संस्कारोंका विज्ञान, सृष्टि, स्थिति प्रलय और मुक्तिका तत्त्व जीव ब्रह्म और ईश्वरका स्वरूप, जीवन्मुक्ति और संन्यासका तत्त्व, प्रवृत्ति-निवृत्ति तत्त्व, सदाचारमहिमा, पुरुषशिक्षा और स्त्रीशिक्षा सम्प्रदाय पन्थ और उपधर्म्मसमीक्षा संन्यासके साथ जगत्सेवाका सम्बन्ध इत्यादि सभी विषय पूर्णरूपसे वर्णित किये जायंगे, जिससे आजकलके अशास्त्रीय और विज्ञानरहित धर्म्मग्रन्थों और धर्म्मप्रचारके द्वारा जो हानि हो रही है वह सब दूर होकर यथार्थ रूपसे सनातन वैदिकधर्म्मका प्रचार होगा। इस ग्रन्थरत्नमें साम्प्रदायिक पक्षपातका लेशमात्र भी नहीं है और निष्पक्षरूपसे सब विषय प्रतिपादित किये गये हैं जिससे सकल प्रकारके अधिकारी कल्याण प्राप्त कर सकें। इसमें और भी एक विशेषता यह है कि, हिन्दूशास्त्रके सभी विज्ञान, शास्त्रीय प्रमाण और युक्तिके सिवाय आजकलकी पदार्थविद्या (Science) के द्वारा भी सब विषय प्रतिपादित किये गये हैं जिससे आजकलके नवशिक्षित पुरुष भी इससे लाभ उठा सकें। इसकी भाषा सरल; मधुर और गम्भीर है। यह ग्रन्थ चौसठ अध्यायों और आठ समुल्लासोंमें पूर्ण है, और आठ खण्डोंमें यह ग्रन्थ अभी सम्पूर्ण हुआ है। प्रथम खण्ड का मूल्य २), द्वितीय का १॥), तृतीय का २) चतुर्थ का २) पञ्चमका २) षष्ठ का १॥), सप्तम भाग का २) और अष्टम भाग का २) है। इसके प्रथम दो खण्ड बढ़िया कागज पर भी छापे गये हैं और दोनों ही एक बहुत सुन्दर जिल्दमें बांधे गये हैं। मूल्य ५) है।

मैनेजर—निगमागम बुकडिपो, सिण्डिकेट भवन, काशी।